International Journal of Multidisciplinary Horizon

ISSN: **3049-2017**
IJMH 2026; 3(2): 317-322
© 2026 IJMH
www.themultijournal.com

Received: 30-03-2026
Accepted: 22-04-2026
Publish : 24-04-2026

श्वेता पाण्डेय
शोधार्थी (संस्कृत विभाग),
डी०जी०पी०जी० कॉलेज,कानपुर

प्रो. आशा रानी पाण्डेय
संस्कृत विभाग प्रभारी,
डी .जी.पी जी कालेज, कानपुर

Correspondence:
श्वेता पाण्डेय
शोधार्थी (संस्कृत विभाग),
डी०जी०पी०जी० कॉलेज,कानपुर

विश्वगुणादर्श चम्पूकाव्य में तीर्थ वर्णन – एक समालोचनात्मक अध्ययन

श्वेता पाण्डेय, प्रो. आशा रानी पाण्डेय

DOI: https://doi.org/10.5281/zenodo.21357916

भूमिका -

भारतीय संस्कृति में तीर्थ केवल भौगोलिक स्थल नहीं अपितु आस्था, अध्यात्म, शुद्धि और मोक्ष का सजीव केंद्र है। 'तीर्थ' शब्द का अर्थ है **"तरति पापादिकम् यस्मात्"** अर्थात जिसके द्वारा मनुष्य पापादि से मुक्त हो जाए उसी को 'तीर्थ' की संज्ञा दी जाती है। पद्यम पुराण में 'तीर्थ' के विषय में उद्धृत है –

"यथाशरीरस्योद्देशाः केचिन्मेध्यतमाः स्मृताः।
तथा पृथिव्यामुद्देशाः केचित् पूण्यतमाः स्मृताः ।।" (पद्मपुराण (उ०ख० २३७/२५)

(अर्थात जिस प्रकार अंग विशेष सर्वाधिक पवित्र माने गये है उसी प्रकार पृथ्वी के भी स्थान विशेष अधिक पवित्र माने गये है, जो तीर्थ नाम से जाने जाते है।)

अथर्ववेद के अनुसार –

"तीर्थस्तरन्ति प्रभवो महीरीति यज्ञकृतः सुकृतो येन सन्ति।" (अथर्ववेद १८/०४/०७)

(अर्थात मनुष्य तीर्थों के द्वारा बड़ी से बड़ी विपत्तियों से पार हो जाते हैं एवं तीर्थो में यज्ञादि कर्मों को करने वाले पुण्यात्मा जिस मार्ग से मोक्ष प्राप्त करते है, उसी मार्ग से तीर्थो का सेवन करने वाले तीर्थसेवी भी मोक्ष प्राप्त करते है) रामायण महाकाव्य में 'तीर्थ' शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग बालकाण्ड के द्वितीय सर्ग में हुआ है-

"सोऽभिषेकं ततः कृत्वा तीर्थे तस्मिन्यथा।
विधि तमेव चिन्तयन्नर्थमुपावर्तत वै मुनिः ।। (बालकाण्ड २/२०)

(अर्थात उन्होंने उत्तम तीर्थ में विधिपूर्वक स्नान किया और उसी विषय का विचार करते हुए वे आश्रम की और लौट पड़े। यहाँ उत्तम तीर्थ से तात्पर्य तमसा नदी और वाल्मीकि आश्रम)

नैदानिक लक्षणों और गीता में वर्णित अर्जुन की अवस्था के मध्य एक स्पष्ट तुलना प्रस्तुत करती है:

इस प्रकार तीर्थ का अर्थ है- वह स्थान जो अपने विलक्षण स्वरुप के कारण पवित्र भावना को जागृत करता है।

'तीर्थ' स्थलों को तीन प्रकार से विभाजित किया गया है – जंगम तीर्थ, मानस तीर्थ और स्थावर तीर्थ।

जंगम तीर्थ – संतो को संसार का जंगम तीर्थ अर्थात भ्रमण शील तीर्थ खा जाता है। जंगमतीर्थ स्वयं का मन तो पवित्र रखते है साथ-साथ सांसारिक लोगो के मलिन मन में पवित्रता के लिए उपक्रम करते है। श्रीमद्भागवतमहापुराण के एक प्रसंग के अनुसार जब विदुरजी अपनी तीर्थयात्रा में महर्षि मैत्रेय से आत्मज्ञान प्राप्त करके हस्तिनापुर वापस आये तब उनसे भेटकर धर्मराज युधिष्ठर बोले –

"भवद्विधा भागवतास्तीर्थभूताः स्वयं विभो।
तीर्थोकुर्वन्ति तीर्थानि स्वान्तःस्थेन गदाभृता ।। (श्रीमद्भागवतमहापुराण १/१३/१०)

(अर्थात प्रभो! आप जैसे भगवान् के प्रिय भक्त स्वयं ही तीर्थस्वरुप होते है। आप लोग अपने हृदय में विराजमान भगवान के द्वारा तीर्थो को भी महातीर्थ बनाते हुए विचरण करते है।)

मानस तीर्थ – मानस अर्थात मन से प्रकट होने वाले सद्विचारों को मानसतीर्थ कहते है। स्कन्दपुराण के अनुसार –

"सत्य तीर्थं क्षमा तीर्थं तीर्थमिन्द्रियनिग्रहः।
वर्णाश्रमाणां गेहेपि तीर्थं शम उदाहृतम् ।।
ज्ञानम् तीर्थं तपस्तीर्थं कथितं तीर्थसप्तकम् ।। (स्कन्द० १/११/८१)

(सत्य, क्षमा, इन्द्रियनिग्रह, सभी प्राणियों के प्रति दया, सरलता, मृदुभाषण, पुण्य आदि ये प्रत्येक एक एक तीर्थ रुपी है।)

महर्षि व्यास कृत महाभारत में मानसतीर्थ का वर्णन करते हुए उद्धृत है –

"अगाधे विमलशुद्धे सत्यतोये धृतिह्रदे ।
स्नातव्यम् मानसं तीर्थे सत्त्वमालम्ब्य शाश्वतम् ।।
तीर्थशौचमनर्थित्वमार्जबम् सत्यमार्दवम् ।
अहिंसा सर्वभूतानामनृशंस्यं दमः शमः ।।

(महाभारत (अनु०पर्व) १०८/३,४)

(अर्थात जिस तीर्थ में धैर्यरुप कुण्ड और सत्य रुप जल भरा हुआ है तथा जो अगाध, निर्मल एवं अत्यंत शुद्ध है, उस मानस तीर्थ में सदा परमात्मा का आश्रय लेकर स्नान करना चाहिए । कामना और याचना का अभाव, सरलता, सत्य, मृदुता, अहिंसा, समस्त प्राणियों के प्रति क्रूरता का आभाव-दया, इन्द्रिय संयम और मनोनिग्रह- ये ही मानस तीर्थ के सेवन से प्राप्त होने वाली पवित्रता के लक्ष्ण है ।)

स्थावर तीर्थ – पृथ्वी पर स्थित स्थल विशेष को "स्थावर तीर्थ" या "भौम तीर्थ" कहते है । महाभारत के अनुशासन पर्व में पितामाह भीष्म युधिष्ठर से स्थावर तीर्थो के विषय में कहते है –

"शरीरस्य यथोद्देशाः शुचयः परिकीर्तिताः ।
तथा पृथिव्या भागाश्च पुण्यानि सलिलानि च ।।
परिग्रहाच्च साधूनां पृथिव्याश्चैव तेजसा ।
अतीव पुण्यभागास्ते सलिलस्य च तेजसा।।" (अनु०पर्व १०८/१६,१८)

(अर्थात जैसे शरीरके विभिन्न स्थान पवित्र बताये गये हैं, उसी प्रकार पृथ्वीके भिन्न-भिन्न भाग भी पवित्र तीर्थ हैं और वहाँका जल पुण्यदायक है । पृथ्वीके कुछ भाग साधु पुरुषोंके निवाससे तथा स्वयं पृथ्वी और जलके तेजसे अत्यन्त पवित्र माने गये हैं ।)

विश्वगुणादर्शचम्पू में वर्णित तीर्थस्थलों का क्षेत्र अत्यंत व्यापक है। यह चम्पूकाव्य उत्तर से दक्षिण और पूर्व से पश्चिम तक भारत की पवित्र स्थल-परम्परा का बोध कराता है। इससे स्पष्ट होता है कि कवि के सामने भारत एक तीर्थमय सांस्कृतिक राष्ट्र के रूप में उपस्थित था। विश्वगुणादर्शचम्पू में वर्णित तीर्थस्थलो का परिचयात्मक वर्णन निम्न प्रकार से है –

भूलोक –

महाकवि वेंकटाध्वरि ने विश्वगुणादर्श चम्पूकाव्य में अपने मुख्य पात्र विश्वावसु और कृशानु के माध्यम से इस भूलोक को ही तीर्थ माना है । अपनी यात्रा के प्रारंभ में विश्वावसु कृशानु से कहता है – **"सखे सकल पुरूषार्थ साधनानुष्ठानस्थानभूतं तावदवलोकयम् भूलोकं।"**

(विश्वगुणादर्श चम्पूकाव्य, गद्य संख्या- ०८)

(अर्थात मित्र समस्त पुरूषार्थ के साधनों के अनुष्ठान के स्थानभूत पृथ्वी लोक को देखो ।) तत्पश्चात ये पृथ्वी विभिन्न दिव्यक्षेत्रो को धारण करने वाली है इसका वर्णन करते हुए विश्वावसु पुनः पृथ्वी का अभिवादन करते हुए कहता है-

"स्वर्गौकोभिरदोनिवासिपुरुषारब्धातिशुद्धाध्वर
स्वाहाकार-वषट्क्रियोत्थममृतं स्वादीय आदीयते ।
आम्नायप्रवणैरलंकृतिजुषेऽमुष्यै मनुष्यैः शुभै-
र्दिव्यक्षेत्रसरित्पवित्रवपुषे देव्यै पृथिवयै नमः ।।

(विश्वगुणादर्श चम्पूकाव्य, श्लोक सं०-०९)

(अर्थात यहाँ के निवासी पुरूषों द्वारा किये जाते हुए अत्यंत शुद्ध यज्ञों के स्वाहाकार और वषट् क्रिया से उत्पन्न अति मधुर अमृत को देवता स्वीकृत करते है। वेदों में प्रवीण कल्याणयुक्त इन मनुष्यों द्वारा सुशोभित, दिव्य आश्रम एवं नदियों से पावन शरीर वाली इस पृथ्वी देवी को नमस्कार 'करता हूँ'।)

इस प्रकार विश्वगुणादर्श चम्पूकाव्य के अनुसार पृथ्वी का वास्तविक वैभव उसके नगरों या राजधानियों में ही नहीं अपितु उन पवित्र स्थलों में निहित है जहाँ ईश्वर, भक्ति, तप, दान और मोक्ष-साधना का समागम होता है।

बदरिकाश्रम –

सनातनधर्म में बदरिकाश्रम की यात्रा अत्यंत पवित्र मानी जाती है, जिसे जीवन में एक बार करना मोक्ष प्राप्ति, पापों से मुक्ति और आध्यात्मिक शुद्धि का मार्ग माना जाता है। यह यात्रा हिमालय की शांति में आत्म-साक्षात्कार, मानसिक शांति और सनातन धर्म के प्रति अटूट आस्था को प्रोत्साहित करती है । यह स्थान पर्वतराज हिमालय के अंक में, अलंकनन्दा नदी के बाएँ तट पर नर और नारायण नामक दो पर्वतश्रेणियों के मध्य स्थित, भगवान नारायण की तपःस्थली है । जिसके विषय में महाकवि वेंकटाध्वरि उद्धृत करते है -

"इदं बदरिकाश्रमस्थलमिहैष नारायण-
स्तपस्यती नमस्यताम् स्थिरतमं तमः शोषयन् ।
विकासिधिषणोन्मिषद्विषयवर्जनाः सज्जना-
जनार्दनमहर्दिवं भुजगमश्चमर्चन्त्यमी ।

(विश्वगुणादर्श चम्पूकाव्य, श्लोक सं० – ३३)

(यह बदरिकाश्रम नाम का स्थान है, यहाँ यह नारायण प्रणतजनों के अधिकाधिक अज्ञान के नाशार्थ तपस्या करते है, 'अतः' इस क्षेत्र के निवासी, प्रकाशोन्मुख बुद्धि द्वारा अंकुरित होते हुए विषयों के त्याग कर्ता साधुजन शेषशायी जनार्दन की रात दिन पूजा करते है ।)

अयोध्या –

अयोध्या भारतीय सांस्कृतिक, धार्मिक एवं ऐतिहासिक चेतना का एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण केंद्र है। इसका नाम ही अपने आप में विशेष अर्थ लिए हुए है—'अयोध्या' अर्थात् जिसे कोई जीत न सके, जो अजेय और अभेद्य हो। यह नगरी प्राचीन काल से ही आध्यात्मिकता, धर्म और आदर्श जीवन-मूल्यों का प्रतीक रही है।

पुराणों एवं महाकाव्यों में अयोध्या का उल्लेख एक आदर्श नगरी के रूप में मिलता है। वाल्मीकि रामायण के अनुसार सरयू तट पर स्थित यह नगर श्रीराम की जन्मभूमि है और इक्ष्वाकु वंश की राजधानी रही। यहाँ की व्यवस्था, समृद्धि और नैतिकता को आदर्श राज्य के रूप में प्रस्तुत किया गया है, जहाँ धर्म, न्याय और लोककल्याण सर्वोपरि थे।

इस तीर्थ रुपी नगरी के विषय में महाकवि वेंकटाध्वरि लिखते है –

"साकेतायः नमः पुराय भवतु स्तोकेतरश्रीपुषे-
नानादोषमुषे तद्दिन्तकजुषे देव्यैःसरय्वै नमः।
येऽमि तत्तटभूमिषु प्रविलसद्रूपाश्च यूपाः स्थिता –
स्तेभ्यो भानुकुलीनकीर्तिलतिकोपघ्नायितेभ्यो नमः ।।

(विश्वगुणादर्श चम्पूकाव्य,श्लोक सं०३६)

(बहुत बड़ी शोभा को धारण करने वाली साकेत नगरी को नमस्कार, अनेक प्रकार के पापों की नाशकर्त्री इस अयोध्या के समीप में स्थित सरयू देवी को भी नमस्कार, उस सरयू के किनारे की भूमि पर सुन्दर रूप वाले जो ये यज्ञीय पशूओ के बाँधने के स्तम्भ खड़े है, सूर्यवंशीय राजाओं की कीर्ति लतिका के आश्रयभूत उन स्तम्भों को नमस्कार है)

इस अयोध्यापुरी को देखकर महाकवि पुनः भक्तिपूर्वक कह उठते है –

"भवसागरशोषणेन पश्यच्चरणान्तःपुरजीवनौषधेन ।
रजसा रघुनाथपादभाजा रचितांहःप्रशमामिमां नमामि ।।
(विश्वगुणादर्श चम्पूकाव्य श्लोक-३७)

(अर्थात संसार सागर के विनाशक, गौतम ऋषि की पत्नी अहिल्या के जीवनार्थ औषधिस्वरूप श्रीरामचंद्र के चरण से सम्बंधित धूलि से पापो का नाश करने वाली इस अयोध्या नगरी को नमस्कार करता हूँ।)

अयोध्या-महात्म्य को पुराणों में भी व्यक्त किया है –

"सरयूतीरमासाद्य दिव्या परमशोभना ।
अमरावतीनिभा प्रायः श्रिता बहुतपोधनैः ।।
(अयोध्या माहात्म्य १/१२)

(अमरावती पूरी की समता करने वाली, परमशोभामयी वह दिव्य अयोध्या पुरी सरयू नदी के तट पर स्थित है और बहुत से तपोनिष्ठ महापुरूषों ने आश्रय ले रखा है ।)

अयोध्या भूमि न केवल भगवान श्रीराम की जन्मभूमि है अपितु कई महापुरूषों की भी भूमि रही है जिसके परिणामस्वरूप ये तीर्थस्वरूप में जानी जाती है।

<u>काशी-</u>

भारतीय सांस्कृतिक, धार्मिक और आध्यात्मिक परम्परा में काशी का स्थान अत्यन्त गौरवपूर्ण, प्राचीन और अद्वितीय है। काशी, जिसे वाराणसी तथा अविमुक्त क्षेत्र भी कहा जाता है, केवल एक नगर नहीं, अपितु भारतीय चेतना, मोक्ष-दर्शन, तीर्थ-परम्परा और सनातन जीवन-मूल्यों का सजीव केन्द्र है। यह नगर गंगा के पावन तट पर अवस्थित होकर सहस्राब्दियों से साधना, ज्ञान, तप, वेदाध्ययन, शैव-वैष्णव-शाक्त उपासना तथा सांस्कृतिक समन्वय का प्रमुख केन्द्र रहा है। भारतीय जनमानस में यह विश्वास दृढ़ है कि काशी में निवास, स्नान, दर्शन, दान, जप, तप और अन्तकालीन प्राणत्याग मनुष्य को विशेष आध्यात्मिक फल तथा अन्ततः मोक्ष प्रदान करता है।

विश्वावसु भगवान् शिव की नगरी काशी की मोक्षमयी गुण का वर्णन करते हुए कहता है

"अत्र देहमपवित्रमपास्यन्नच्छमृच्छति वपुः किल यस्य ।
लोचने शुचिरवाप्तनिटाले मस्तके हरि पदाम्बु जटाले ।।
(विश्वगुणादर्श चम्पूकाव्य, श्लोक-८३)

(इस काशी में अपवित्र शरीर को छोड़ते हुए स्वच्छ देह को निश्चय ही (प्राणी) प्राप्त होता है।जिसके भाल प्रदेश में स्थित नेत्रों में अंगार, जटायुक्त मस्तक प्रदेश में गंगोदक है ।)

छान्दोग्य उपनिषद में भी काशी मोक्षनगरी के रूप में वर्णित है –

"काश्याम् विदेहकैवल्यं भवतीति सुनिश्चितम्"
(छान्दोग्योपनिषद् ३/8/२)

(काशी में जीवो को विदेह कैवल्य प्राप्त होता है, यह सुनिश्चित है)

अतः काशी तीर्थ भारतीय धर्म और संस्कृति की उस महान परम्परा का प्रतीक है, जिसमें मोक्ष की आकांक्षा, श्रद्धा की गहराई, ज्ञान की ज्योति और शिवत्व की अनुभूति एक साथ समाहित हैं। यही कारण है कि काशी को "तीर्थराज" के समकक्ष प्रतिष्ठा प्राप्त है और भारतीय तीर्थ-चिन्तन में इसका स्थान सर्वथा अनुपम माना जाता है।

<u>जगन्नाथ क्षेत्र-</u>

भारतीय तीर्थ-परम्परा में पुरुषोत्तम क्षेत्र का स्थान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण, पवित्र और आध्यात्मिक दृष्टि से विशिष्ट है। यह क्षेत्र वर्तमान में भारत के पूर्वी तट पर पुरी (ओडिशा) में स्थित है और मुख्यतः 'भगवान जगन्नाथ' की उपासना के कारण समस्त भारतवर्ष में श्रद्धा और भक्ति का महान केन्द्र माना जाता है। "पुरुषोत्तम" शब्द स्वयं भगवान विष्णु के परम, सर्वोच्च और दिव्य स्वरूप का द्योतक है; अतः यह क्षेत्र उस परम पुरुष की लीला-भूमि और अनुग्रह-स्थली के रूप में प्रतिष्ठित है। भारतीय धार्मिक मान्यता के अनुसार यह क्षेत्र केवल एक मंदिर-नगरी नहीं, अपितु मोक्ष, भक्ति, लोकमंगल और सांस्कृतिक समन्वय का दिव्य तीर्थ है।

यहाँ पर भगवान जगन्नाथ काष्ठ रूप में अपने अग्रज बलराम और भगिनी सुभद्रा के साथ अपने भक्तो को मोक्ष प्रदान करते है । विश्वावसु के अनुसार –

"यत्तीरे पुरूषोत्तमस्थलमिदं यक्षाप्सरः-किन्नर
श्रेष्ठैर्नित्यमधिष्ठितं भगवतः सान्निध्यसौख्यास्पदम् ।
अत्र त्यक्तवतामसून् करगता मुक्तिस्तदास्तामहो
देहोदाहविनाकृतोऽप्यविकृतः काष्ठादिवत्तिष्ठाति ।।
(विश्वगुणादर्श चम्पूकाव्य, श्लोक-११२)

(अर्थात जिसके किनारे पर यक्ष,अप्सरा,किन्नरादि श्रेष्ठ देवों से नित्य सेव्यमान, नारायण के समीप्य से सुख का स्थानभूत यह जगन्नाथ का स्थान है। इस क्षेत्र में प्राणों को छोड़ने वालो को हस्तिगत है, इसे तो जाने दो, आश्चर्य है कि 4रीर आग्निदाह किये बिना भी विकृत न होता हुआ काष्ठ आदि की तरह स्थित रहता है ।)

<u>रजतपीठपुर (उडुपी)</u>

भारतीय तीर्थ-परम्परा में रजतपीठपुर (कर्नाटक) का स्थान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण, पवित्र तथा दार्शनिक दृष्टि से विशिष्ट है। प्राचीन ग्रन्थों और दक्षिण भारतीय वैष्णव-परम्परा में यह क्षेत्र विशेष रूप से उडुपी के रूप में प्रसिद्ध है, जो वर्तमान कर्नाटक राज्य में स्थित एक महान धार्मिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक केन्द्र है। "रजतपीठपुर" नाम स्वयं इस क्षेत्र की दिव्यता, पवित्रता और गौरव का बोध कराता है। यह केवल एक नगर या मंदिर-केन्द्र नहीं अपितु भक्ति, वेदान्त, साधना, आचार-परम्परा और लोकजीवन के अद्भुत समन्वय का प्रतीक तीर्थ है।

रजतपीठपुर की महिमा मुख्यतः भगवान श्रीकृष्ण की उपासना तथा मध्वाचार्य की दार्शनिक परम्परा से जुड़ी हुई है। उडुपी स्थित श्रीकृष्ण मंदिर भारतीय वैष्णव भक्ति की महान धरोहर है, जहाँ भगवान कृष्ण बालरूप में भक्तों को दर्शन देते हैं। यह क्षेत्र विशेष रूप से द्वैत वेदान्त की परम्परा का प्रमुख केन्द्र माना जाता है, क्योंकि यहाँ श्रीमद् आनन्दतीर्थ भगवान मध्वाचार्य ने अपनी वैदिक-वैष्णव

साधना, शास्त्र-चिन्तन और धर्म-प्रचार के माध्यम से इसे दार्शनिक गरिमा प्रदान की। इस प्रकार रजतपीठपुर केवल भक्ति का स्थल नहीं, बल्कि तत्त्वचिन्तन और दार्शनिक साधना का भी महान केन्द्र है।

इसी विषय में महाकवि वेंकटाध्वरि ने उद्धृत किया है –

"रजतपीठपुरम् ननु काञ्चनश्रियमिदं वहते महदद्भूतम् ।
इह वसन् शुभरीतिवहो बुधः परमयोगत एव विराजते ।।
(विश्वगुणादर्श चम्पूकाव्य,श्लोक-१७५)

(यह रजतपीठ नामक नगर सुवर्ण की शोभा को धारण करता है, यह अत्यंत आश्चर्य है। इस नगर में वास करते हुए शुभाचरणशील (आनंद तीर्थ नामक ज्ञानी) विद्वान् जन चिरंतन समाधि द्वारा ही सुशोभित है)

अच्छैद्विजेन्द्रैरमृताभिलाषादासेवितो भुव्यभिजातकीर्तिः ।
आनन्दतीर्थाह्वयमत्र कश्चिदन्वर्थयन्नाविरभून्मुनीन्द्रः ।।
(विश्वगुणादर्श चम्पूकाव्य, श्लोक १७६)

(निर्मल अन्तःकरण सम्पन्न ब्राह्मणों द्वारा मोक्ष को इच्छा से सुवासित (शुभ्र उत्तम पक्षियों द्वारा जल की इच्छा से आसेवित), पृथ्वी पर ख्यातकीर्ति आनंदतीर्थ नाम को चरितार्थ करते हुए कोई मुनीन्द्र प्रकट हुए ।)

<u>वेंकटगिरि-</u>

भारतीय तीर्थ-परम्परा में वेंकटगिरि तीर्थ का स्थान अत्यन्त पवित्र, गौरवपूर्ण और आध्यात्मिक दृष्टि से विशिष्ट है। दक्षिण भारत के प्रसिद्ध पर्वतीय तीर्थों में वेंकटगिरि का नाम अत्यन्त श्रद्धा और भक्ति के साथ लिया जाता है। यह क्षेत्र मुख्यतः भगवान श्रीवेंकटेश्वर (श्रीनिवास, बालाजी) की उपासना के कारण विख्यात है और वैष्णव भक्ति, तीर्थ-संस्कृति तथा धार्मिक आस्था का एक महान केन्द्र माना जाता है।

"वेंकटगिरि" शब्द स्वयं इस क्षेत्र की पवित्रता और दैवीय महिमा का परिचायक है। संस्कृत एवं पुराण-परम्परा में इसे वेंकटाचल, वेंकटाद्रि, शेषाचल आदि नामों से भी अभिहित किया गया है। यह क्षेत्र वर्तमान आंध्र प्रदेश में स्थित तिरुमला पर्वतमाला से सम्बद्ध है, जहाँ भगवान विष्णु के अवतारस्वरूप श्रीवेंकटेश्वर का दिव्य मंदिर प्रतिष्ठित है।

भारतीय जनमानस में यह विश्वास है कि यह क्षेत्र कलियुग में भगवान के साक्षात् अनुग्रह का केन्द्र है; अतः वेंकटगिरि को "कलियुग वैकुण्ठ" के रूप में भी प्रतिष्ठा प्राप्त है।

"बैकुण्ठेऽपि नीरुत्कण्ठमकुण्ठविभवं महः ।
तदत्र चित्रचारित्रं रमते रमया समम् ।।"
(विश्वगुणादर्श चम्पूकाव्य, श्लोक १९४)

(सर्वव्यापी ऐश्वर्य युक्त अनिर्वचनीय, विष्णु का तेज बैकुण्ठ में भी रुचि न रखते हुए इस शेष शैल पर विचित्र चरित्र संपन्न हो लक्ष्मी के साथ रमण करता है ।)

इसीलिए महापुरुष जो जन्म-मृत्यु चक्र से मुक्ति की अभिलाषा को त्यागकर पुनः इस वेंकटगिरि पर किसी भी योनी में जन्म लेने के आकांक्षी है ।

"पन्नगेषु च नगेषु खगेषु द्वीपिराजसु दृषत्सु ।
वल्लरीषु च दरीषु झरीषु प्रार्थयन्ति जनिमत्र मुनीन्द्राः ।।"
(विश्वगुणादर्श चम्पूकाव्य,श्लोक १९२)

(अर्थात इस शैल पर सर्प,वृक्ष,पक्षी,भयंकर व्याघ्र, मृग, पत्थर, लता, गुहा एवं जल प्रवाहो में भी बड़े बड़े ऋषि जन जन्म चाहते है ।)

अतः वेंकटगिरि तीर्थ भारतीय तीर्थ-चिन्तन में एक ऐसे पवित्र स्थल के रूप में प्रतिष्ठित है, जहाँ भक्ति, दर्शन, प्रकृति, संस्कृति और मोक्ष-साधना का अद्वितीय समन्वय मिलता है। यह तीर्थ श्रद्धालुओं के लिए केवल पूजा-स्थल नहीं अपितु आध्यात्मिक उन्नयन, मनोशुद्धि और ईश्वर-सान्निध्य की अनुभूति का दिव्य केन्द्र है। इसी कारण वेंकटगिरि तीर्थ भारतीय धार्मिक-सांस्कृतिक विरासत में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है।

<u>वीक्षारण्य तीर्थ –</u>

विक्षारण्य, जो वर्तमान तमिलनाडु के तिरुवल्लूर में स्थित वीरराघव क्षेत्र के रूप में प्रसिद्ध है, दक्षिण भारत की वैष्णव-परम्परा में वीरराघव क्षेत्र का विशेष स्थान है, जहाँ भगवान विष्णु अपने दयामय, रक्षक और कल्याणकारी स्वरूप में भक्तों को अनुग्रह प्रदान करते हैं।

जैसा की विश्वावसु इस तीर्थस्थान की अलौकिकता का वर्णन करते हुए कहता है –

"विक्षारण्यमिदं वदन्ति सरसी हृत्तापनाशिन्यास-
वास्या रोधसि वीरराघव इति प्रख्यातनामा हरिः ।
व्यक्तं राजति वीतिहोत्र इव यो विस्तीर्णहेतिद्युतिः
क्षेत्रं प्राप्तकुशस्थलं प्रभजति श्रीशालिहोत्राश्वितम् ।।
(विश्वगुणादर्श चम्पूकाव्य,श्लोक-२१९)

(अर्थात इसे विक्षारण्य नाम से लोग कहते है, यह तालाब हृदय के संताप का निवारक है, इसके किनारे 'वीरराघव' इस नाम से ख्यात, फैली हुई आयुधों की कान्ति से युक्त, श्री शालिहोत्र मुनि द्वारा पूजित क्षेत्र में रहते है ।)

"विक्षारण्य" नाम से ही इस क्षेत्र की प्राचीनता और तपोभूमि-स्वरूप का बोध होता है। "अरण्य" शब्द यह संकेत करता है कि यह क्षेत्र प्राचीन काल में ऋषियों, तपस्वियों और साधकों की साधना-भूमि रहा होगा। ऐसे अरण्य-प्रदेश भारतीय धार्मिक परम्परा में सदैव विशेष महत्त्व रखते रहे हैं, क्योंकि इन्हीं स्थलों में ईश्वर-साक्षात्कार, तपस्या और अध्यात्म का उत्कर्ष सम्भव माना गया है। विक्षारण्य भी इसी परम्परा का एक महत्त्वपूर्ण उदाहरण है, जहाँ प्रकृति और परमात्मा का अनुभव एक साथ सम्भव होता है।

इसी विषय पर विश्वावसु का ये कथन अत्यंत उपयुक्त है –

"उपेत्य वीक्षावनमुन्नतः सदा सुवर्णवलल्या सुमनःपूषाश्रितः ।
अहीनसेव्यो हरिचन्दनस्तनोत्युपाश्रितामुचितां सुवासनाम् ।।
(विश्वगुणादर्श चम्पूकाव्य,श्लोक-२२२)

(अर्थात बुधजनों (पुष्पों) की पोषिका, सुन्दर वर्णवाली (लक्ष्मी) से सतत आलिंगित, श्रेष्ठलोगो (महासर्पो) द्वारा संसेव्य, विक्षारण्य को पाकर उन्नत चन्दन रूप में विष्णु (हरिचन्दन वृक्ष) भक्तो (पास में आये लोगो) को समुचित मनोभिलाष (सुगंध) प्रदान करते है ।)

<u>कांचीपुरम तीर्थ -</u>

भारतीय तीर्थ-परम्परा में कांचीपुरम् (कांची) का स्थान अत्यन्त प्राचीन, पवित्र और बहुआयामी है। इसे "सप्तपुरियों" में एक माना गया है—अर्थात् वे सात नगर जहाँ मोक्ष की प्राप्ति का विशेष महत्व

बताया गया है। दक्षिण भारत में स्थित यह नगर केवल एक धार्मिक केन्द्र नहीं अपितु आध्यात्मिक साधना, दर्शन, शास्त्र-अध्ययन, मन्दिर-परम्परा और सांस्कृतिक वैभव का अद्वितीय संगम है।

"सुमनोजनतास्थानं स्थानं सद्रूपशोभनी सेयम् ।
सुरताभ्युदयविधात्री शुभकाञ्ची साधु रज्जयति चेतः ।।
(विश्वगुणादर्श चम्पूकाव्य,श्लोक २६६)

(अर्थात पंडित जनों का निवास स्थान, उत्तम वृक्षों से सुशोभित, देवत्व की वृद्धिकर्त्री, प्रसिद्ध यह कल्याणरूपा कांची नगरी इस स्थान पर हृदय को लुभा रही है ।)

कांचीपुरम् की विशेषता यह है कि यहाँ शैव, वैष्णव और शक्त—तीनों प्रमुख उपासना-परम्पराएँ समान रूप से विकसित हुई हैं। इसका वर्णन महाकवि वेंकटाध्वरि ने अत्यंत परिपक्वता से किया है । विष्णु कांची कांचीपुरम् का वह भाग है जो मुख्यतः भगवान विष्णु तथा उनके विभिन्न स्वरूपों के मंदिरों के कारण प्रसिद्ध है। यह क्षेत्र विशेष रूप से श्रीवैष्णव परम्परा का महान केन्द्र माना जाता है। यहाँ स्थित वरदराज पेरुमाळ मंदिर इसका प्रमुख आध्यात्मिक केन्द्र है जो हस्तिशैल पर स्थित है । इसका वर्णन करते हुए महाकवि अलंकारित भाषा में व्यक्त करते है–

"य एष राजत्कटकः सदालिभिः सामश्रितः शोभनदानसंपदा ।
स नित्यशुद्धं वरदं तमुद्वहन्यथार्थनामा गजभूभृदीक्ष्यते ।।
(विश्वगुणादर्श चम्पूकाव्य,श्लोक-२६८)

(अर्थात शोभन निम्नभाग युक्त (सुन्दर गंडस्थलवाला), सज्जनों की पंक्तियों (भ्रमरवलियों) एवं कल्याणकारी दान संपत्ति (सुन्दर दान मद की समृद्धि) से युक्त सामने वाला पर्वत सतत निर्मल (श्वेत वर्ण) प्रसिद्ध वरद नामक भगवान् (शोभन दांतों) को धारण किये हुए अपने नाम को चरितार्थ करने वाला, वह हस्तिशैल (गजराज) दिखाई दे रहा है ।)

शिव कांची जो मुख्यतः भगवान शिव की उपासना से सम्बद्ध है। इसका प्रमुख केन्द्र एकाम्बरेश्वर मंदिर है, जो दक्षिण भारत के महान शैव तीर्थों में से एक है । महाकवि वेंकटाध्वरि वर्णन करते हुए कहते है–

"शशांकमौलिः सहकारमूले कैलासवासी स इहाविरासीत् ।
यस्याग्निभूर्दृक् च तनूभवश्च योषाऽपि भूषाऽपि च नागराजी ।।
(विश्वगुणादर्श चम्पूकाव्य, श्लोक-३२०)

(अर्थात जिसके नेत्र और पुत्र अग्निभूः एवं भूषण और पत्नी भी नागराजी (सर्पावली, नागराजकन्या) है, वह कैलास निवासी चन्द्रमौली इस कांची नगरी में आम्रवृक्ष के नीचे प्रकट हुए ।)

शक्ति कांची कांचीपुरम् का वह स्वरूप है जो देवी कामाक्षी की उपासना से सम्बद्ध है। यहाँ स्थित कामाक्षी अम्मन मंदिर शक्ति कांची का मुख्य केन्द्र है। यह क्षेत्र शाक्त साधना, देवी-उपासना, तन्त्र, शक्ति-तत्त्व और मातृशक्ति की दिव्य अभिव्यक्ति का केन्द्र माना जाता है।

महाकवि ने "श्रीकामाक्षीदेवीवर्णनम्" में माँ कामाक्षी का वर्णन करते हुए लिखते है –

"काञ्चीनगरविभूषा कामाक्षी कल्पमञ्जरी भजताम् ।
रक्षा सुरसेनानाम् राजति शर्वस्य सर्वस्वम् ।।
(विश्वगुणादर्श चम्पूकाव्य, श्लोक ३१२)

(अर्थात कांची नगरी की अलंकारभूता, सेवक जनों की कल्पवल्लरी, देवसेना की संरक्षिका,शंकर की सर्वस्व,कामाक्षी देवी विराजमान है ।)

अतः कांचीपुरम् का विष्णु कांची, शिव कांची और शक्ति कांची में विभाजन केवल स्थानगत नहीं अपितु भारतीय धर्म की त्रिविध उपासना-परम्पराओं का जीवंत स्वरूप है। इन तीनों के कारण कांचीपुरम् एक ऐसे महातीर्थ के रूप में प्रतिष्ठित होता है, जहाँ भक्ति, ज्ञान, तप, शक्ति और मोक्ष सभी एक साथ साकार होते हैं।

<u>श्रीरंगक्षेत्र तीर्थ –</u>

दक्षिण भारत की वैष्णव तीर्थ-परम्परा में श्रीरंग क्षेत्र का स्थान अत्यन्त गौरवपूर्ण, प्राचीन और आध्यात्मिक दृष्टि से अनुपम है। यह तीर्थ मुख्यतः भगवान श्रीरंगनाथ की उपासना के कारण प्रसिद्ध है, जो भगवान विष्णु के शेषशायी स्वरूप में यहाँ प्रतिष्ठित हैं। भारतीय धार्मिक परम्परा में श्रीरंग क्षेत्र केवल एक देवालय-स्थल नहीं अपितु भक्ति, शरणागति, मोक्ष, मन्दिर-संस्कृति और वैष्णव दर्शन का एक महान केन्द्र माना जाता है। इस कारण यह क्षेत्र सम्पूर्ण भारतवर्ष के श्रद्धालुओं के लिए विशेष आस्था और साधना का केन्द्र है।

श्रीरंगम् वर्तमान तमिलनाडु राज्य में कावेरी नदी और उसकी शाखा कोल्लिडम् के मध्य स्थित एक पवित्र द्वीप-क्षेत्र है। यह भौगोलिक स्थिति स्वयं इस क्षेत्र को अत्यन्त पावन बनाती है, क्योंकि भारतीय धार्मिक चेतना में नदी, द्वीप और देवालय का समन्वय विशेष तीर्थ-महिमा का आधार माना गया है। जल, भूमि और देवत्व के इस त्रिविध संगम के कारण श्रीरंग क्षेत्र प्रकृति और अध्यात्म के दिव्य समन्वय का प्रतीक बन जाता है।

महाकवि इस तीर्थ क्षेत्र का वर्णन करते हुए उद्धृत करते है –

"प्रातःप्रातः पयसि विमले पावने सह्यपुत्र्याः स्नायम् स्नायम् सकलविषयत्यागिनो योगिनोऽमी।
वारं वारं भुजगशयनं लोचनाभ्यां पिबन्तः क्षेमं क्षेमं क्षणवदखिलं कालमत्र क्षिपान्ति।। (विश्वगुणादर्श चम्पूकाव्य, श्लोक ३९८)

(यहाँ समस्त भोगो के त्यागी ये योगी जन प्रति प्रभात कावेरी के पवित्र निर्मल जल में स्नान कर कर कर शेषशायी श्रीरंगनाथ को बार बार आँखों से देखते हुए समस्त कल्याणमय समय को क्षण की तरह बिता देते है ।)

रामानुजाचार्य तथा अन्य आचार्यों की साधना, उपदेश और दार्शनिक परम्परा ने श्रीरंगम् को केवल भक्ति का स्थल नहीं अपितु विशिष्टाद्वैत दर्शन के महान केन्द्र के रूप में भी प्रतिष्ठित किया है। इस प्रकार श्रीरंग तीर्थ में आस्था और दर्शन दोनों का अद्भुत समन्वय दिखाई देता है।

<u>कुम्भघोण तीर्थ –</u>

"कुम्भघोण" नाम स्वयं एक गहन पौराणिक संकेत देता है। पुराणों और स्थानीय परम्पराओं के अनुसार, प्रलयकाल में सृष्टि के बीज, वेद, अमृत और दिव्य तत्त्व एक कुम्भ (घट) में सुरक्षित रखे गए थे। जब प्रलय का अन्त हुआ, तब वह कुम्भ इसी क्षेत्र में आकर स्थिर हुआ और

भगवान शिव ने उसे भंग किया, जिससे नई सृष्टि की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई। इसी पौराणिक आख्यान के कारण यह क्षेत्र कुम्भ-सम्बद्ध सृष्टि-नवोत्पत्ति का प्रतीक माना जाता है। इस प्रकार कुम्भघोण केवल एक तीर्थ नहीं, बल्कि सृष्टि, पुनर्जन्म, पवित्रता और नवजीवन की दार्शनिक भावना का भी प्रतिनिधि है।

"मणिमयफणितल्पे मल्लिकापुंजकल्पेशमित-
जगदभद्राम् संश्रयन्योगानिद्राम् ।
दहरकुहरवर्ती देवताचक्रवर्ती -
दलितदुरितबाणे दृश्यते कुम्भघोणे ।।

(विश्वगुणादर्श चम्पूकाव्य,श्लोक-४५९)

(अर्थात मल्लिका की पुष्पराशि के समान मणिमय शेषशय्या पर संसार के अमंगल को शांत करने वाली योग निद्रा का सहारा लेते हुए हृदयाकाश के निवासी, देवों के सम्राट (शाङ्र्गपाणि भगववान) पापरुपी बाणों के नाशक कुम्भघोण क्षेत्र में दिखाई पड़ते है ।)

सेतु –

भारतीय तीर्थ-परम्परा में सेतु तीर्थ का स्थान अत्यन्त पवित्र, गौरवपूर्ण और धार्मिक दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। यह तीर्थ मुख्यतः भगवान श्रीराम से सम्बद्ध होने के कारण सम्पूर्ण भारतवर्ष में विशेष श्रद्धा का केन्द्र माना जाता है। "सेतु" शब्द यहाँ केवल एक भौतिक पुल या मार्ग का बोध नहीं कराता, बल्कि यह भक्ति और पराक्रम, धर्म और विजय, मानव और दैवीय शक्ति, लोक और मोक्ष—इन सबके मध्य स्थापित एक आध्यात्मिक सेतु का भी प्रतीक है। इसी कारण सेतु तीर्थ भारतीय धार्मिक चेतना में अत्यन्त ऊँचा स्थान रखता है। सेतु तीर्थ दक्षिण भारत के उस समुद्री क्षेत्र से सम्बद्ध है, जो वर्तमान में **रामेश्वरम्** और **धनुष्कोडि** के निकट स्थित माना जाता है।

पौराणिक और रामायणीय परम्परा के अनुसार, जब भगवान श्रीराम ने लंका की ओर प्रस्थान किया, तब उन्होंने वानर-सेना के सहयोग से समुद्र पर एक सेतु का निर्माण कराया। यही सेतु आगे चलकर रामसेतु या सेतुबंध के नाम से विख्यात हुआ। इस घटना ने इस स्थल को केवल ऐतिहासिक या पौराणिक महत्त्व ही नहीं दिया अपितु इसे धर्मयुद्ध, संकल्प, साहस और ईश्वर-कृपा के प्रतीक तीर्थ के रूप में प्रतिष्ठित कर दिया। अतः सेतु तीर्थ वह पवित्र स्थल है, जहाँ रामकथा की स्मृति, भक्ति और आदर्श जीवन-दर्शन एक साथ साकार होते हैं।

सेतु महात्म्य के विषय में विश्वावसु अपने भक्तिमय उदगार को प्रकट करता हुआ कहता है-

"अस्तोकद्दप्तिरपि वारिधिरेष यस्मात्
त्रस्तो विभर्ति विपुलोपलसान्द्रसेतुम् ।
गोपायते दुरितवन्ति जगन्ति तस्मै
कोपे ते रघुपते महते नमोऽस्तु ।।

(विश्वगुणादर्श चम्पूकाव्य, श्लोक-४७९)

(अत्यंत गर्व युक्त होते हुए भी यह समुद्र जिस से भयभीत हो तमाम पत्थरो से लादे हुए सेतु को धारण करता है, पापयुक्त संसार की रक्षा करने वाले उस महान तुम्हारे क्रोध को हे रामचन्द्र ! नमस्कार स्वीकृत हो ।)

इसी के आगे सेतु की आध्यामिकता का वर्णन करते हुए विश्वावसु कहता है –

"अम्भोराशि वानरा लङ्घयन्त्वित्येतद्व्याजीकृत्य राजीवनेत्रः ।
अंहोराशेर्लङ्घनार्थम् नराणामम्भोराशौ सेतुमुच्चैरबध्नात् ।।"

(विश्वगुणादर्श चम्पूकाव्य, श्लोक-४८१)

(सभी वानर जलराशि को लाँघ जाये इसे बहाना बनाकर श्री रामचन्द्र ने मनुष्यों को पाप सागर से पार होने के लिए समुद्र में ऊँचा सेतु बांधा ।)

सन्दर्भ ग्रन्थ –

1. शास्त्री प्रो० सुरेन्द्रनाथ श्रीवेंकटाध्वरिप्रणीतः विश्वगुणादर्शचम्पू, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन : 2017
2. महर्षिवाल्मीकिप्रणीत श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण, गीताप्रेस, गोरखपुर
3. पाण्डेय, अनुवादक पंडित रामनारायणदत्त शास्त्री 'राम' श्रीमन्महर्षि वेदव्यासप्रणीत महाभारत,गीताप्रेस, गोरखपुर
4. शर्मा, अनुवादक वेदमूर्ति, तपोनिष्ठ पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य, अथर्ववेदसंहिता, प्रकाशन- युग निर्माण योजना, गायत्री तपोभूमि, मथुरा (उत्तर प्रदेश)
5. महर्षि वेदव्यास प्रणीत श्रीमद्भागवतमहापुराण (प्रथम खंड) (द्वितीय खंड), ,गीताप्रेस, गोरखपुर, बयासीवाँ संस्करण
6. शुक्ल अनुवादक श्री विंध्येश्वरीप्रसादजी, 'अयोध्या माहात्म्य', गीताप्रेस गोरखपुर, द्वितीय संस्करण
7. पद्मपुराण, गीताप्रेस, गोरखपुर
8. श्री वेदव्यासप्रणीत स्कन्दपुराण, गीताप्रेस, गोरखपुर